भारत में मीडिया स्वतंत्र तो है लेकिन गुलाम बनकर रहता है

कई बार मीडिया भी अपने मूल चरित्र से इजर कुछ लाभ के लिए सजा और बाजार के हाथों की कठपुतली बन जाता है। इन सब के बावजूद एक तबका ऐसा है जो आज भी स्वतंत्र अखबार के बिना सरकार की मान्यता को खारिज करता है। और मीडिया की आजादी के लिए प्रतिबद्ध है। सवाल उठता है कि ज्या मीडिया पर युक्ति युक्त प्रतिबंध मतलब लोगों के मौलिक अधिकार का हनन है? ज्या ये 'आईडिया ऑफ फ्रीडम' की मान्यता के खिलाफ है? ज्या ये आपातकाल दो का संकट है। इस तरह मूल सवाल यही है कि वर्तमान में मीडिया का चाल, चरित्र और आचरण ज्या और ज्यूं है? तथा उस पर सरकार के नियंत्रण की कोशिश कितनी उचित है? वही मिशन से प्रोफेशन की ओर बढ़ते मीडिया की संकल्पना बाजारवाद की ओर इंगित करती है। इस बात को दरकिनार नहीं किया जा सकता कि आधुनिक समय में मीडिया पर प्रलोभन और धन कमाने की चाहत सवार है।

भारत में पत्रकारिता संकट के दौर से गुजर रही है। सच की आवाज को बुलंद करने वाले पत्रकारों पर दिनोंदिन हमले तेज होते जा रहे हैं। जम्मू-कश्मीर की राजधानी श्रीनगर में 'राइजिंग कश्मीर' के संपादक व वरिष्ठ पत्रकार शुजात बुखारी की गोली मारकर अज्ञात हमलावरों ने हत्या कर दी। यह हमला उस समय हुआ जब वे अपने दफ्तर से इफ्तार पार्टी के लिए निकल रहे थे। इससे पहले बेंगलुरु में कन्नड़ भाषा की साप्ताहिक संपादक व दक्षिणपंथी आलोचक गौरी लंकेश की गोली मारकर निर्मम हत्या करने का मामला सामने आया था। ठीक इससे पहले नरेंद्र दाभोलकर, डॉ. एम.एम. कलबुर्गी और डॉ. पंसारे की हत्या हुई थी। देश में लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के प्रति बढ़ती करूरता का अंदाजा तो इससे ही लगाया जा सकता है कि पिछले वर्ष में नौ और पत्रकारों को अपनी जान गंवानी पड़ी थी।

नि:संदेह, मीडिया सूचना स्त्रोत के रुप में खबरें पहुंचाने का काम करता है, तो वहीं हमारा मनोरंजन भी करता है। मीडिया जहां संचार का साधन है, तो वहीं परिवर्तन का वाहक भी है। इसी वजह से एडविन वर्क द्वारा मीडिया को 'लोकतंत्र का चौथा' स्तंभ कहा गया था। भारत में मीडिया को संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) के वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से जोड़कर देखा जाता है। यानी की प्रेस की आजादी मौलिक अधिकार के अंतर्गत आती है। लेकिन, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में निरंतर हो रही पत्रकारों की हत्या, मीडिया चैनलों के प्रसारण पर लगायी जा रही बंदिशें व कलमकारों के मुंह पर आए दिन स्याही पोतने जैसी घटनाओं ने प्रेस की आजादी को संकट के घेरे में ला दिया है। आज ऐसा कोई सच्चा पत्रकार नहीं होगा, जिसे रोज-ब-रोज मारने व डराने की धमकी नहीं मिलती होगी।

इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ जर्नलिस्ट यानी आई.एफ.जे. के सर्वे के अनुसार, वर्ष 2016 में पूरी दुनिया में 122 पत्रकार और मीडियाकर्मी मारे गये। जिसमें भारत में भी छह पत्रकारों की हत्या हुई। वहीं पिछले एक दशक के अंतराल में 2017 को पत्रकारों की सुरक्षा के मामले में सबसे खराब माना गया है। 'रिपोर्टर्स विदाउट बॉर्डर्स' की मानें तो दुनिया भर में पत्रकारों और स्वतंत्र मीडिया पर दबाव बढ़ रहा है। प्रेस की आजादी पर संस्था ने जो अंतरराष्ट्रीय सूची जारी की है उसमें भारत 136वें स्थान पर है। पत्रकारों की सुरक्षा पर निगरानी रखने वाली प्रतिष्ठित अंतरराष्ट्रीय संस्था 'कमेटी टू प्रोटेक्स जर्नलिस्ट' (सीपीजे) की मानें तो भारत में भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने वाले पत्रकारों की जान को खतरा है। 2015 में जारी इस संस्था की एक विशेष रिपोर्ट में कहा गया था कि भारत में रिपोर्टरों को काम के दौरान पूरी सुरक्षा अभी भी नहीं मिल पा रही है। इसी कारण उन्हें अपनी जान से हाथ धोना पड़ रहा है। 'प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया' के एक अध्ययन में भी यह बात प्रकाश में आयी थी कि पत्रकारों की हत्याओं के पीछे जो तत्व होते हैं, वे सजा पाने के बजाय बचकर निकल जाते हैं। आश्चर्य तो इस बात पर है कि इन रिपोर्ट्स के आने के लगभग तीन वर्ष बीत जाने के बाद भी पत्रकारों को सुरक्षित करने की दिशा में अब तक कारगर कदम नहीं उठे हैं।

दरअसल, भारत के संदर्भ में पत्रकारिता कोई एक-आध दिन की बात नहीं है, बल्कि इसका एक दीर्घकालिक इतिहास रहा है। जहां यूरोप में प्रेस के अविष्कार को पुर्नजागरण एवं नवजागरण के लिए एक सशक्त हथियार के रुप में प्रयुक्त किया गया था। उसी तरह भारत में प्रेस ने आजादी की लड़ाई में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर गुलामी के दिन दूर करने का भरसक प्रयत्न किया था। लेकिन, प्रेस की आजादी को लेकर आज कई सवाल उठ रहे हैं। पत्रकार और पत्रकारिता के बारे में आज आमजन की राय क्या है? क्या भारत में पत्रकारिता एक नया मोड़ ले रही है? क्या सरकार प्रेस की आजादी पर पहरा लगाने का प्रयास कर रही है? क्या बेखौफ होकर सच की आवाज को उठाना लोकतंत्र में "आ बैल मुझे मार" अर्थात् खुद की मौत को सामने से आमंत्रित करना है? ये कुछ ऐसे सवाल हैं, जो आज हर किसी के जेहन में उठ रहे हैं। माना जाता है कि हाल के दिनों में सरकार की नीतियों पर सवाल उठाने वाले लोगों पर हमले तेज हुए हैं। इसके सबसे ज्यादा शिकार ईमानदार पत्रकार व सच्चे समाजसेवी रहे हैं। उन्मत्त भीड़ द्वारा किये गये हमलों में कई बार सरकार की भी शह होती है। यूं तो सत्ता और मीडिया में छत्तीस का आंकड़ा रहा है। लेकिन, कई बार शक्तिशाली सत्तायें मीडिया के दमन से भी परहेज नहीं करती हैं।

दूसरी बात यह कि कई बार मीडिया भी अपने मूल चरित्र से इत्तर कुछ लाभ के लिए सत्ता और बाजार के हाथों की कठपुतली बन जाता है। इन सब के बावजूद एक तबका ऐसा है जो आज भी स्वतंत्र अखबार के बिना सरकार की मान्यता को खारिज करता है। और मीडिया की आजादी के लिए प्रतिबद्ध है। सवाल उठता है कि क्या मीडिया पर युक्ति युक्त प्रतिबंध मतलब लोगों के मौलिक अधिकार का हनन है? क्या ये 'आईडिया ऑफ फ्रीडम' की मान्यता के खिलाफ है? क्या ये आपातकाल दो का संकट है। इस तरह मूल सवाल यही है कि वर्तमान में मीडिया का चाल, चरित्र और आचरण क्या और क्यूं है? तथा उस पर सरकार के नियंत्रण की कोशिश कितनी उचित है? वही मिशन से प्रोफेशन की ओर बढ़ते मीडिया की संकल्पना बाजारवाद की ओर इंगित करती है। इस बात को दरकिनार नहीं किया जा सकता कि आधुनिक समय में मीडिया पर प्रलोभन और धन कमाने की चाहत सवार है।

खबरों व डिबेट्स के नाम पर फेक न्यूज का चलन इस बात को पुख्ता करता है। आज के मीडिया के संदर्भ में यह विचारणीय है कि विदर्भ में किसानों का हाल जानने के लिए केवल छह पत्रकार ही जाते हैं और मुंबई के फोटो शो में छह सौ पत्रकारों की भीड़ उमड़ पड़ती है? मीडिया में आम आदमी की समस्याओं से इत्तर होकर अनुपयोगी रियल्टी शो संचालित होने लग गये हैं। वस्तुत: पत्रकारिता की जनहितकारी भावनाओं को आहत किया जा रहा है।

यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि मीडिया की स्वतंत्रता का मतलब किसी भी परिस्थिति में स्वच्छंदता नहीं है। खबरों के माध्यम से कुछ भी परोसकर देश की जनता का ध्यान गलत दिशा की ओर ले जाना स्वीकार्य नहीं किया जा सकता है। मीडिया की अति-सक्रियता लोकतंत्र के लिए घातक सिद्ध हो रही है। निष्पक्ष पत्रकार पार्टी के एजेंट बन रहे हैं। एक बड़ा पत्रकार तबका सत्ता की गोद में खेल रहा है। आदर्श और ध्येयवादी पत्रकारिता धूमिल होती जा रही है व पीत पत्रकार का पीला रंग तथाकथित पत्रकारों पर चढ़ने लग गया है। हाल की सरकारें दक्षिणपंथी विचारधारा की कट्टरता में सबसे पहले मीडिया की स्वतंत्रता को बाधित करती हैं और विपक्ष को मृतप्राय बनाकर छोड़ देती है। जिससे जनहितकारी नीतियों की उपेक्षा कर देश में लूटतंत्रकारी नीतियों को आसानी से लागू किया जा सके।

आज मीडिया की दिशा व दशा को लेकर गंभीर चिंतन की आवश्यकता है। सत्ता, प्रशासन और समाज को बिना किसी भय के सच बताना एक पत्रकार का दायित्व होता है। यदि इसमें उसकी जान को ही खतरा हो जाये, तो फिर यह सरकार और पुलिस की व्यवस्था पर सवाल है। लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की आजादी को बचाये रखने की दिशा में सरकार को जल्द से जल्द कदम उठाने चाहिए। सरकार और विपक्ष के नेता मीडिया की आजादी के नाम पर बातें तो बड़ी-बड़ी करते हैं, लेकिन उस अनुरूप धरातल पर कहीं कुछ दिखलाई नहीं दे रहा। केन्द्र व राज्य की सरकारें यदि सचमुच लोकतंत्र को स्वस्थ रखना चाहती हैं, तो उन्हें इसके चौथे स्तम्भ को मजबूती प्रदान करनी ही होगी। भ्रष्टाचार में लिप्त अधिकारियों, माफिया, नेताओं और आपराधिक तत्वों को उजागर करने वाले पत्रकारों के लिए सुरक्षा आवश्यक है। यह सुरक्षा 'पत्रकार सुरक्षा कानून' लागू होने से सुनिश्चित की जा सकेगी।